वृद्ध जीवन की समस्याएँ : 'गिलिगडु'

सोनी साव
प्राध्यापिका (सेक्ट), हिन्दी विभाग, पंचकोट महाविद्यालय, सरबड़ी
पुरुलिया, 723121 (प0 बं0), मो0-9933551309,
E-mail : sonyshaw2810@gmail.com

वृद्धावस्था मानव जीवन चक्र में मृत्यु के पहले की अवस्था है। इस अवस्था से पूर्व मानव शारीरिक रुप से सक्षम होता है। वह घर-परिवार के दायित्वों को पूर्ण करने में सक्षम होता है। वृद्धावस्था तक आते-आते उनकी शारीरिक क्षमता कम हो जाती है जिसके कारण वह अपने संतानों पर आश्रित होने लगते हैं। 'विमला लाल' कहती है "बुढ़ापा मानव-जीवन की एक ऐसी अवांछनीय अवस्था है जो नितान्त प्राकृतिक सत्य है और एक ऐसा सत्य है जो अटल भी है।"[1] उनके पास अनुभवों का विपुल भंडार होता है। लेकिन शारीरिक क्षमता में ह्रास हो जाने से परिवार में उनकी उपस्थिति बोझ का रुप लेने लगती है। उन्हें दुःख, एकाकीपन तथा उपेक्षा जैसी असहनीय पीड़ा के साथ जीवन के आखिरी पड़ाव में गुजर-बसर करना पड़ता है। इस अवस्था में पहुँच कर व्यक्ति समाज के सभी विषयों तथा समस्याओं पर अपने तजुर्बे के माध्यम से मूल्यांकन करता है।

'चित्रा मुद्गल' द्वारा रचित उपन्यास 'गिलिगडु' आकार में छोटा है लेकिन इसमें व्यक्त वृद्धों की समस्याओं को अत्यन्त व्यापकता तथा गम्भीरता के साथ प्रस्तुत किया गया है। वर्तमान समय में समाज के साथ-साथ परिवार में भी तिरस्कार की भावना से व्यथित बुजुर्ग वृद्धाश्रम में रहने को विवश है। प्रेम और सम्मान के आकांक्षी वृद्ध अपने संतानों द्वारा उपेक्षा की भावना से दुःखी हो जाते हैं। दो वृद्धों के जीवन को आधार बनाकर लिखा गया यह उपन्यास अनेक वृद्धों की समस्याओं को समेटे हुए है। 'डॉ0 करुणा शर्मा' लिखती हैं "यह उपन्यास संतानों द्वारा तिरस्कृत दो सार्थक बुजुर्गों के निरर्थक जीवन का कथाफलक है।"[2]

इस उपन्यास की शुरुआत बाबू जसवंत सिंह के सुबह दर्दभरी फारिंग होने और कुत्ते 'टॉमी' को फारिंग कराने से होती है। टॉमी फैशन और प्रतिष्ठा प्रतीक के रुप में घर में पालित पोषित है। आधुनिकता के दौर में स्वयं को आधुनिक दिखाने तथा अपने स्टेटस को दिखाने के लिए व्यक्ति अपनी-अपनी संस्कृति को भूलते जा रहे हैं। ऐसे में स्टेटस सिंबल कुत्ता भी पीछे नहीं रहता है। वह भी आधुनिकता के बाहरी रंग में रंग जाता है। अंग्रेजी भाषा तथा म्यूजिक चैनल का आदि होता टॉमी को यह बर्दाश्त नहीं कि बाबू जसवंत सिंह हिन्दी समाचार देखें। 'टॉमी' का दु:खी होना बहू को बर्दाश्त नहीं होता है।

वर्त्तमान समय के युवा पीढ़ी अपने बच्चों को अपने में ही जीना सीखा रही है। बाजारवाद के बढ़ते प्रभाव ने पारिवारिक जीवन को भी प्रभावित किया है। ऐसे-ऐसे खिलौने बच्चों को खेलने दी जा रही है जिससे उनका सामाजिक विकास नहीं हो पा रहा है। बच्चे परिवार में रहकर भी अपनी अलग दुनिया बना लेते हैं जिसमें आने की अनुमति किसी की भी नहीं है, जिससे उनका बौद्धिक विकास तो हो रहा है परन्तु हृदय संवेदनहीन होते जा रहा है। ''बुद्धि-विकास की आड़ में बड़ी खूबसूरती से बच्चों को संवेदना-च्युत किया जा रहा - इतना कि बच्चे कभी परिवार में न लौट सके, न कभी अपना कोई परिवार गढ़ सकें।''[3] जसवंत सिंह भी इस प्रभाव से अछूते नहीं रहते हैं। वे अपने जीवन के आखिरी क्षणों तक अपने परिवार के प्रति पूर्ण रुप से समर्पित रहना चाहते हैं। वह भी अपने पोते 'मलय को जन्मदिन को पूरे उत्साह के साथ मनाना चाहते हैं किन्तु परिवार और समाज से कटा 'मलय' केवल अपने दोस्तों के साथ अपना जन्मदिन मनाना चाहता है। उसके अनुसार पार्टी में किसी बड़े का होना पार्टी बोरिंग बना देती है। वह किसी बड़े व्यक्ति के होने को बन्धन समझते हैं और वह अपने ऊपर किसी भी प्रकार का बन्धन नहीं चाहते हैं।

कानपुर से दिल्ली आने के बाद यहाँ केवल उनका अपना है तो वह 'कर्नल स्वामी'। जसवंत सिंह कभी दिल्ली आना नहीं चाहते थे किन्तु पत्नी की

मृत्यु के बाद उन्हें आना पड़ता है। संवेदनहीन होते परिवार में वृद्धों की स्थिति उपयोगिता मात्र से है यदि उनका उपयोग किया जा सके तो परिवार के सदस्य उन्हें अपना मानते हैं अन्यथा वह केवल बोझ बन कर रह जाते हैं। नरेन्द्र की अम्मा अच्छे-अच्छे पकवान बनाती थी जिससे नरेन्द्र उसकी पत्नी, पोते सभी खुश थे किन्तु दूसरी तरफ घर के मुखिया रहे पिता की उपयोगिता केवल कुत्ते को फारिंग कराने भर की थी। जसवंत सिंह आत्म-चिन्तन करते हैं कि यदि वह भी कुछ कार्य जानते तो शायद यह उपेक्षित भाव उन्हें न सहना पड़ता - "तुमने अगर नरेन्द्र की अम्मा की भाँति पकवान बनाने में दक्षता हासिल कर ली होती तो निश्चय ही बहू सुनयना के लिए तुम्हारी कोई उपयोगिता होती। बूढ़ा टेलुआ उसके किस काम को जो खाने-हगने के अलावा कुछ और नहीं कर सकता।"[4] एक पुरुष अपना सारा जीवन अपने परिवार के भरण-पोषण, परिवार के सुख-सुविधा की सामग्री अर्जित करने में लगा देता है। उसके जीवन का लक्ष्य अपने बच्चों का कुशल भरण-पोषण होता है। बच्चों की सुख-सुविधा, खान-पान, पहनावे आदि का पूरा ध्यान रखता है। अपनी जरूरतों की वस्तु से मुँह मोड़ कर बच्चों की फरमाइश पूरी करता है किन्तु बुढ़ापे में उसे परिणामस्वरुप केवल उपेक्षित भाव ही मिलता है। जसवंत सिंह अपनी पसन्द का खाना क्या था यह भी भूल जाते हैं। उन्हें अपने पुत्र व पुत्रवधू से अपेक्षाएँ होती हैं कि वह उनके बुढ़ापे को आरामदायक बनाये। जो जीवन उन्होंने बच्चों को बनाने में लगाया है उसी जीवन के बचे वर्षों में वह सुख पा सके। कर्नल स्वामी जब बताते हैं कि उनकी बहु माधवी बहुत ही मुलायम इडली बनाती है उनके दाँतों का ख्याल कर मेहनत और सावधानी से बनाती है तब जसवंत सिंह भावुक हो उठते हैं। उनके घर में उनके खाने और उनके तबीयत की किसी को कोई चिन्ता नहीं। वह केवल जीवन काटने के लिए पेट भरते हैं। वह भोजन उनके लिए सही है या नहीं इसकी न पुत्र व बहू को परवाह है। "दरअसल दिल्ली आकर वे भूल ही गए कि भोजन में उनकी पसंद का कोई महत्त्व शेष है। अक्सर उन्हें वह खाना

पड़ता है या खिलाया जाता है जो उनके ढीले और खोखले हो आए दाँतों और बिगड़े हाजमें को मंजूर नहीं होता।"[5] चाय पीने के कुछेक मिनटों बाद बालकनी (जो कि उनका कमरा है) से झाँककर पूछा जाता है कि दलिए का डिब्बा खाली है साँझ से पहले नहीं आ सकता। नास्ते में दो दिन की बची दाल के द्वारा चिल्ला खाना होगा। वे ऐसी उपेक्षा की मार झेलने को विवश हैं।

वे अपने पुत्र के ही घर में स्वयं को टॉमी से भी नीचा समझते हैं। यह घर उनका 'अपना' न होकर पुत्र का 'घर' बन जाता है जहाँ वह केवल स्थान घेरने वाला वस्तु है। जसवंत सिंह कहते हैं - "वे अनिच्छा प्रकट करने की औकात नहीं रखते। इच्छा-अनिच्छा घरवालों की होती है। घर में आकर रहने वालों की नहीं।"[6] अपने उम्र के हिसाब से भोजन की चाह में जसवंत सिंह पुत्र 'नरेन्द्र' से आपत्ति प्रकट करते हैं तब पिता की अपेक्षा के विपरीत पुत्र का जवाब और लंबा-चौड़ा भाषण उन्हें भीतर ही भीतर संकोच से भर देता है।

घर का अस्तित्व परिवार में निहित होता है और परिवार सदस्यों की एकजुटता से बनती है। उपन्यास में जसवंत सिंह के मित्र 'हरिहर दुबे' हैं जो अपने जीवन के अंतिम क्षणों में भी अकेला रह जाते हैं। बेटा फर्ज के नाम पर पिता को कभी-कभार हाथ खर्च भेज देता है। बीमार पड़ने पर इलाज करवा देता है इतने भर से ही अपने फर्ज से मुक्ति पा लेना चाहता है। वृद्धि पिता के आँखों के मोतियाबिन्द का ऑपरेशन करवाकर बेटा अपने कर्तव्यों से मुक्त हो जाता है। पिता अकेलेपन में जीवन व्यतीत करने के लिए विवश, अन्त में अकेले जीवन व्यतीत करते हुए हृदयघात से मृत्यु को प्राप्त कर जाता है। कई दिनों के बाद बदबू से परेशान पड़ोसी द्वारा दरवाजा खोलने पर हरिहर की लाश खटिये के नीचे पड़ी मिलती है। यह घटना मानवीय संवेदना को तार-तार कर देनेवाला है। परिवार के होते हुए भी इस प्रकार की मृत्यु दर्शाती है कि किस प्रकार मनुष्य केवल 'स्व' केन्द्रित हो गया है। उसे अपने समाज, अपने परिवार

से कोई लेना-देना नहीं है। वह केवल अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

नई पीढ़ी के लिए पुरानी पीढ़ी के सारे कार्य व्यर्थ है। माता-पिता से अलग रहकर ही वे सुख का अनुभव करते हैं। यही एक कारण है कि सोसाइटी में बूड़े नजर ही नहीं आते हैं। कर्नल स्वामी से भेंट होने से पहले जसवंत सिंह भी आते-जाते हम-उम्र खोजते रहते हैं। घर के अकेलेपन को दूर करने के लिए बुजुर्ग घर के बाहर साथी खोजते हैं। 'सी' बिल्डिंग के एकमात्र 'मिस्टर भट्ट' के अलावा उन्हें दूसरा बूढ़ा सोसाइटी में नजर नहीं आया। 'मिस्टर भट्ट' बताते हैं किस प्रकार वृद्धों के द्वारा बनाया गया 'लाफिंग क्लब' युवा वर्ग को रास नहीं आया। पार्क में सुबह की सैर करने वाले जवानों को लटक रही खालों और नकली बत्तीसी वालों बूढ़ों की राक्षसी हँसी बर्दाश्त नहीं होती और वह 'लाफिंग क्लब' सत्संग में बदल गया।

उम्र के साथ शरीर में काफी बदलाव आते हैं उन बदलावों को व्यक्ति चाहकर भी नहीं रोक सकता है। नरेन्द्र अपने पिता को ऐडजस्टमेंट करने की सलाह देता है। पिता-पुत्र के बीच भीतर ही भीतर दूरियाँ बढ़ गई थी। बंद कमरे के बावजूद उग्र होती आवाजों ने जसवंत सिंह को घर में और भी गैर कर दिया था। पुत्र के दुर्व्यवहार ने पिता को उपेक्षित भाव से भर दिया था। बार-बार उपेक्षित होने पर बाबू जसवंत सिंह को कभी नहीं लगता है कि यह उनका घर है। बेटे, बहू के व्यवहार ने पिता के हृदय को अधिक आघात पहुँचाया था और उसके बाद पुत्री का भी पुत्र के तरफ से बोलना जसवंत सिंह को अच्छा नहीं लगता है। घर में वह अतिरिक्त वस्तु की तरह है जिसका जीवन केवल जीवन चक्र को समाप्त करना है। वे मानते हैं कि घर के कुत्ते की स्थिति उनके स्थिति से कहीं बेहतर है। टॉमी को घर के सदस्य प्रेम तो करते हैं, उसके स्वास्थ्य, खान-पान, प्राथमिक जरूरतों से लेकर व्यर्थ के खर्चों का भी ध्यान रहता है। सही वक्त पर टॉमी को फारिंग कराना, शाम के समय टहलाना यहाँ

तक कि उसके पसन्द के म्यूजिक के प्रति भी सभी सचेत रहते हैं। टॉमी से घर का रुतबा बढ़ाता है और बुजुर्ग 'जसवंत सिंह' उनके रुतबा को कलंकित करता है।

जीवन के आखिरी पड़ाव में जब एक वृद्ध को अपने परिवार की सबसे अधिक आवश्यकता होती है, वे अपने जीवन के पलों को परिवार के सुख-दु:ख, बच्चों की हँसी-खुशी के साथ बिताना चाहते हैं, तब उन्हें वृद्धाश्रम का मार्ग दिखाया जाता है। आधुनिक समाज में युवा पीढ़ी का अपने से बड़ों के प्रति सम्मान खत्म होते जा रहा है। वह अपने जीवन को अपने शर्त पर जीना चाहता है। उसे घर के वृद्ध बोझ लगते हैं। अपने संतानों द्वारा ही बुजुर्ग को अकेलेपन के अंधकार में ढकेला जाता है जहाँ उसका अपना कोई नहीं। वर्त्तमान समय में युवा पीढ़ी वृद्धों के प्रति अपनी जिम्मेदारी को टालते जा रहे हैं। जहाँ माँ-बाप अपने सम्पूर्ण जीवन को अपने बच्चों की खुशी, उनके अच्छे भविष्य में न्यौछावर कर देते हैं वहीं आज की पीढ़ी माता-पिता के द्वारा दी गई अनेकानेक कुर्बानियों को अनदेखा कर देती है। उन्हें वृद्धाश्रम भेज देते हैं। यह समय स्पर्धा का समय है। इसमें युवा वर्ग अपने को प्रतिष्ठित करने के लिए अपने देश, घर, परिवार को छोड़ विदेश में स्थापित होने में जरा भी संकोच नहीं करते हैं। अपने तरक्की के लिए माता-पिता को वृद्धाश्रम भेजने में भी पीछे नहीं हटते हैं। उन्हें इस भ्रम में रखते हैं कि वृद्धाश्रम में उनके हम-उम्रों के साथ उनका समय अच्छा गुजरेगा। इस बात से बेखबर की पिता अपने-अपने परिवार और घर के अलावा और कहीं भी खुशी की अनुभूति नहीं कर सकते। "भैया तो यहाँ तक सोच रहे हैं कि जहाँ बाबूजी का मन लगे, वे प्रसन्नचित्त रहें, उन्हें वहीं रखा जाए। उन्होंने पता लगाया है कि नोएडा के सेक्टर पचपन में कोई आनंद निकेतन वृद्धाश्रम है, क्यों न उनके रहने की व्यवस्था वहीं कर दी जाए। हम-उम्रों की जमात में बाबूजी का मन लगा रहेगा। भैया जगह देख आए हैं। वे बता रहे हैं कि बहुत सुंदर है। भोजनादि की व्यवस्था उत्तम कोटि की है। उन्हें वहाँ

रखने के निर्णय से भैया पर खर्च का अतिरिक्त बोझ पड़ेगा। भैया उसे सहर्ष उठाने के लिए तैयार है।''[7]

वर्त्तमान समय में बुजुर्गों को केवल अकेलापन ही नहीं सहना पड़ रहा है बल्कि इससे भी खराब स्थिति में रहना पड़ रहा है। वृद्धों के प्रति सम्मान की भावना में कमी तथा उनके साथ दुर्व्यवहार के साथ उन पर शोषण भी किया जा रहा है। अपनी बात मनवाने के लिए उन्हें मारा-पीटा भी जाता है। कर्नल स्वामी अचानक पार्क में आना बन्द कर देते हैं। उनका विच्छेद जसवंत सिंह को मजबूर कर देता है और वह उनसे मिलने उनके घर जाने का निर्णय करते हैं। जसवंत सिंह मन में अनेक अभिलाषा लिये घर से निकलते, जो खुशी उनके पुत्र, बहु द्वारा नहीं मिला वह खुशी वह कर्नल स्वामी के काल्पनिक परिवार से चाहते हैं। कर्नल स्वामी के घर जाकर उन्हें पता चलता है कि जिस परिवार की बातें 'कर्नल स्वामी' किया करते थे वह तो मात्र एक कल्पना थी। वह अपने घर में नितान्त अकेले जीवन जीने को विवश थे। परिवार के साथ रहने का मोह कर्नल स्वामी को छोड़ता नहीं। वह अपनी एक काल्पनिक परिवार की दुनिया बनाते हैं। मिसेज श्रीवास्तव से मालूम होता है कि पत्नी की मृत्यु के बाद वह अकेले ही रहते थे। तीन बेटों के रहते हुए भी वह अकेले थे।

मानवता को तार-तार करने वाली घटना अपने पुत्र द्वारा ही पिता को पीटा जाना जैसी घटनाएँ आज तेजी से हो रही है। वृद्धों के प्रति हिंसक व्यवहार उनमें भय पैदा करता है। सबसे सुरक्षित स्थान घर पर ही हिंसा, शोषण और अत्याचार का शिकार वृद्ध हो रहे हैं। ''कर्नल स्वामी पहले ही राजनगर स्थित गाजियाबाद वाले कीमती प्लॉट को बेचकर उन्हें फ्लैट खरीदने में मदद कर चुके थे। श्रीनारायण का प्रस्ताव उन्होंने ठुकरा दिया। क्रुद्ध श्रीनारायण ने पिता पर हाथ उठा दिया।''[8] ऐसे बच्चों के होने से तो अच्छा बे-औलाद होना है। जिसके सहारे जीवन जीने की आस हो वही जीवन के शत्रु बन जाय तो उससे अच्छा औलाद ही न हो। ''ऐसी कसाई औलादों से तो आदमी निपूता भला। हमें इस

बात का कोई गम नहीं कि हमारी कोई अपनी औलाद नहीं।''[9] कर्नल स्वामी के गढ़े हुए काल्पनिक परिवार और मलिन बच्चों को पढ़ाकर अपना समय बिताने वाली कहानी बताकर वृद्ध जनों को जीवन जीने का तरीका भी बता देते हैं, साथ ही वृद्धों को एक सुझाव भी देते हैं कि अपने पसीने की गाढ़ी कमाई बच्चों पर सोच-विचार कर ही खर्च करें।

सदियों से परम्परा चली आ रही है, पिता को मुखाग्नि उसका पुत्र देगा और इसके साथ भी एक परम्परा यह भी है कि पिता की सम्पत्ति का हकदार केवल उसका पुत्र होता है। किन्तु इस उपन्यास के पात्र बाबू जसवंत सिंह उस परम्परा को तोड़ते हैं। अन्त में जसवंत सिंह अपनी वसीयत बदलकर अपनी नौकरानी सुनगुनियाँ के नाम कर देते हैं और मरणोप्रांत अपने मृत शरीर को मुखाग्नि देने का अधिकार अपने पुत्र को न देकर सुनगुनिया के पुत्र को देते हैं। ''बाबू जसवंत सिंह वल्द ठाकुर समरेंद्र बहादुर सिंह- गाँव सगवर, पोस्ट सगवर, जिला - उन्नाव (उ0 प्र0)। अपने जीवन की वसीयत बदल रहे हैं। वे सदियों से चली आ रही खानदानी परम्परा को बदलना चाहते हैं। उसे नए सिरे से नए हरफों में लिखना चाहते हैं। उन्हें समझ में नहीं आता कि लोग अपनी वसीयत बदलने का जोखिम क्यों नहीं उठाना चाहते। उन्हें क्यों नहीं समझ में आता कि वसीयत बदले बिना उनके जीवन में गति संभव नहीं।''[10] वृद्ध जसवंत सिंह द्वारा उठाया गया यह कदम समाज के पुरातन परम्परा को एक नवीन गति तथा दिशा देती है।

उपसंहार

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि 'गिलिगडु' हिन्दी साहित्य में वृद्धों के जीवन से जुड़ी समस्याओं को संवेदनात्मक रुप में प्रकट करता है। यह उपन्यास 'जसवंत सिंह', 'कर्नल स्वामी' और 'हरिहर दूबे' के माध्यम से समाज में वृद्धों की स्थिति को रेखांकित करता है। उपन्यास में जिस प्रकार से वृद्ध पात्र के परिवार होते हुए भी अकेलापन, परिवार द्वारा उपेक्षित तथा अनादर भाव को झेलते हुए दिखाई देते हैं। उसी प्रकार वर्तमान समय में भी वृद्धों की दशा है। स्नेह के आकांक्षी वृद्ध, संतानों से स्नेह न पाकर कल्पनाओं में स्नेहयुक्त परिवार की परिकल्पना करने लगते हैं। 'कर्नल स्वामी' एक ऐसी काल्पनिक जीवन की कल्पना करने लगते हैं जहाँ वे अपने परिवार द्वारा उपेक्षा की मार न झेलते हों, बल्कि पारिवारिक स्नेह तथा सम्मान के साथ जीवन व्यतीत करते हैं। परन्तु उनका यह काल्पनिक संसार केवल कल्पनाओं तक ही सीमित रह जाता है। वृद्धावस्था में जिस प्रेम की आवश्यकता होती है वह उनके बढ़ते उम्र और जीर्ण होते शरीर के साथ लुप्त हो जाते हैं। फलतः समाज तथा परिवार द्वारा तिरस्कृत वृद्ध वृद्धाश्रम में रहने के लिए विवश होते हैं।

सन्दर्भ सूची

1. लाल विमला, वृद्धावस्था का सच, कल्याणी शिक्षा परिषद, नई दिल्ली, संस्करण-2019, पृ0 सं0-58
2. सिंह अनन्त कुमार, जनपथ, अंक - अक्टूबर-2013, पृ0 सं0-82
3. मुद्गल चित्रा, गिलिगडु, सामयिक प्रकाशन, संस्करण-2019, पृ0 सं0-34
4. वही, पृ0 सं0-37
5. वही, पृ0 सं0-38
6. वही, पृ0 सं0-39
7. वही, पृ0 सं0-96-97
8. वही, पृ0 सं0-137
9. वही, पृ0 सं0-138
10. वही, पृ0 सं0-142